IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

निजीकरण एवं शिक्षा: सिंहावलोकन

डॉ राजेश कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर,शिक्षाशास्त्र

श्री बजरंग स्नातकोत्तर महाविद्यालय,दादर आश्रम,सिकंदरपुर,बलिया।

शोध सार

निजीकरण आज के वर्तमान परिवेश में एक अनिवार्य आवश्यकता है।पश्चिमी देशों से चलने वाला यह आंदोलन भारत में 1991 से देखने को मिलता है।निजीकरण सीमित सरकारी संसाधनों की कमी को पूरा करने का एक साधन है।विकास के युग में यदि विश्व के अन्य देशों की प्रतिस्पर्धा में खड़े रहना है,तो निजीकरण अश्यंभावी है। शिक्षा भी इससे अछूती नहीं है।सार्वभौमिक शिक्षा की उपलब्धता हेतु निजीकरण कीआवश्यकता है।परंतु उसकी गुणवत्ता से समझौता करना बेमानी है। निजीकरण के लाभों में मुख्य रूप से सार्वभौमिक शिक्षा की प्राप्ति,प्रतिस्पर्धा के कारण गुणवत्तापूर्ण शिक्षा,सरकार पर आर्थिक बोझ की कमी आदि प्रमुख हैं।व इसकी हानियों पर चर्चा करें,तो व्ययसाध्य शिक्षा, अभिभावकों का शोषण,शिक्षकों का शोषण, ग्रामीण स्तर पर स्तरहीन शिक्षा आदि हैं।आज आवश्यकता है, कि विकसित पश्चिमी देशों का अंधानुकरण न कर निजीकरण के दोषों के निवारण के साथ संतुलित रूप से लागू किया जाए।

परिचय

सामान्य तौर पर निजीकरण सार्वजनिक स्वामित्व को निजी हाथों में सौंपकर सरकारी वित्त पोषण एवं नियंत्रण से पीछे हट जाना है।निजीकरण का सर्वप्रथम प्रयोग 1960 में पीटर एफ. ड्रकर ने अपनी पुस्तक"द एज ऑफ डिस्कंटिन्यूटी"में किया था।इसका प्रारंभ भी हमें पश्चिमी देशों से देखने को मिलता है।तत्कालीन आवश्यकताओं को देखते हुए एवं सीमित आर्थिक संसाधनों के कारण उत्पादन के दृष्टिगत निजीकरण को बल मिला।भारत में निजीकरण की शुरुआत 1991 से देखने को मिलती है।यह निजीकरण की प्रक्रिया सार्वजनिक क्षेत्र के पूर्ण भाग पर या किसी एक क्षेत्र में हो सकती है।

निजीकरण एवं शिक्षा: परस्पर प्रभाव

राजनीतिक दृष्टिकोण से शिक्षा उत्तम नागरिक गुणों से युक्त मानव निर्माण की प्रक्रिया है।भारतीय संवैधानिक प्रावधान के अनुसार शिक्षा समवर्ती सूची का विषय है।शिक्षा विकास का आधार स्तंभ है।स्वतंत्रता के पूर्व भी अनिवार्य शिक्षा की मांग हमारे स्वतंत्रता सेनानियों के द्वारा विभिन्न मंचों पर उठाई जाती रही है।स्वतंत्रता के उपरांत शिक्षा के उत्तरोत्तर विकास हेतु समय-समय पर अनेक आयोग एवं समितियां का गठन किया गया,जिनका उद्देश्य तत्कालीन शिक्षा की जांच के उपरांत शिक्षा के विकास के लिए प्रभावी उपाय सुझाना था।इसमें राधाकृष्णन आयोग,मुदालियर आयोग,कोठारी आयोग आदि प्रमुख हैं।इन आयोगों की सिफारिश के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों का निर्माण किया गया,परंतु सीमित संसाधनों के कारण भारत जैसी विशाल जनसंख्या के लिए बेहतर शिक्षा की व्यवस्था करना सरकार के लिए दूर की कौड़ी प्रतीत होती है।इन समस्याओं के दृष्टिगत शिक्षा में निजीकरण के विचार को बल मिला।इसकी परिणति स्वरूप आज हम पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर प्राथमिक,माध्यमिक एवं उच्च स्तर तक बहुतायत में निजी संस्थाएं शिक्षा के प्रचार का काम कर रहे हैं।उच्च शिक्षा के क्षेत्र में केवल महाविद्यालय ही नहीं,बल्कि अनेक निजी विश्वविद्यालय भी खोले जा रहे हैं।इस निजीकरण की प्रक्रिया से प्रौद्योगिकी,चिकित्सा,प्रबंधन,अध्यापक शिक्षा एवं अन्य व्यावसायिक क्षेत्र भी अछूते नहीं हैं।

स्वतंत्रता के उपरांत भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया है।जिसमें निजी एवं सार्वजनिक दोनों संसाधनों का प्रयोग सम्मिलित है।प्रत्येक प्रक्रिया के दो पहलू होते हैं,लाभ एवं हानि।इस पर विचार कर किसी अंतिम निर्णय तक पहुंचा जा सकता है।

शिक्षा के क्षेत्र में सार्वजनिक संस्थाओं की स्थिति आज चिंता का विषय है।पर्याप्त संसाधनों की अनुपलब्धता के कारण शिक्षा का स्तर गिरता जा रहा है।आए दिन खबरों में सुनने को मिलता है, कि अमुख सरकारी संस्थान की छत गिरने से इतने छात्र घायल हुए। कुछ सरकारी संस्थानों में अनिवार्य शैक्षिक संसाधन अनुपलब्ध हैं।स्तरीय कक्षा कक्ष,पुस्तकालय,प्रयोगशाला,खेल की सामग्री,पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी है।इन सभी कारणों से आज अभिभावकों का सर्वजनिक शिक्षण संस्थानों से मोह भंग हुआ है।इन सभी परिस्थितियों ने न केवल निजीकरण की मांग को बलवती किया है, अपितु निजीकरण का मार्ग भी प्रशस्त किया है।

निजीकरण का दूसरा मुख्य कारण आर्थिक संसाधनों का अभाव है।भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हेतु बड़े पूंजी निवेश की आवश्यकता है।इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु बजट का एक बड़ा हिस्सा शिक्षा पर खर्च करना होगा,परंतु सुरक्षा,स्वास्थ्य जैसे महत्वपूर्ण विषयों को दरकिनार कर ऐसा करना संभव नहीं है।आधुनिक युग में बदलती हुई आवश्यकताओं को देखते हुए विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की आवश्यकता है।जिसके लिए संपूर्ण संसाधनों से युक्त पर्याप्त मात्रा में संस्थान होने चाहिए,जो देश की आवश्यकता के अनुरूप कुशल मानव शक्ति का सृजन कर सकें।

आज सरकारी शिक्षकों पर शिक्षा के अतिरिक्त अन्य कार्यों यथा जनगणना,चुनाव ड्यूटी आदि कार्यों का उत्तरदायित्व है।जिससे वह अपने मूल कार्य मानव निर्माण के प्रति निष्ठा पूर्वक कार्य नहीं कर पाता है।आज शिक्षा में स्वायत्त संस्थाओं की बात की जा रही है।स्थानीय समस्याओं का निदान भी राष्ट्रीय एवं राज्य सरकार की नियामक संस्थाओं द्वारा हो रहा है।जिससे स्थानीय आवश्यकताओं की अनदेखी होती है।

भारत में बेरोजगारी लंबे समय से एक ज्वलंत समस्या बनी हुई है।इस हेतु समय-समय पर विभिन्न आयोगों ने व्यवसायीकरण का सुझाव दिया है।इसके लिए बड़ी संख्या में विश्व स्तरीय व्यावसायिक और तकनीकी संस्थानों की आवश्यकता है,जो गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के द्वारा कुशल नागरिक तैयार कर सकें।यहां भी संसाधनों का अभाव हमारा रास्ता रोक लेता है।

भ्रष्टाचार एक ज्वलंत समस्या है।समय-समय पर इससे जुड़ी खबरें हमें सुनने को मिलती रहती हैं। पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी जी ने कहा था,कि केंद्र से ₹100 चलता है,परंतु धरातल तक केवल ₹10 ही पहुंचते हैं,यह युक्ति भ्रष्टाचार की पोल खोलती प्रतीत होती है।

विकसित देशों में निजीकरण का बोलबाला है।अमेरिका इसका एक ज्वलंत उदाहरण है।निजीकरण से शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होती है,जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से शिक्षा के स्तर में उन्नयन करती है।

शिक्षा में निजीकरण की हानियों पर चर्चा करें,तो आज हम देखते हैं,कि प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक निजीकरण का बोलबाला है,सरकार शिक्षा को अनुत्पादक मानकर उसके विकास की जिम्मेदारी निजी हाथों में सौंप कर अपने कर्तव्यों की इतिश्री करना चाहती है।आज आधे से अधिक शैक्षिक संस्थाएं निजी हाथों द्वारा संचालित है।इस निजीकरण के कारण शिक्षा माफियाओं का बोलबाला है।निजी संस्थानों में शिक्षा इतनी महंगी है,कि सामान्य व्यक्तियों की पहुंच से बाहर है।यदि पहुंच में है तो वह गुणवत्ता विहीन है।एक तरफ संविधान में अनिवार्य एवं निशुल्क प्राथमिक शिक्षा मूल अधिकार में सम्मिलित है,तथा स्कूल चलो अभियान,सर्व शिक्षा अभियान जैसे कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।दूसरी तरफ निजी शिक्षा व्ययसाध्य है।निजी संस्थानों में गुणवत्तायुक्त शिक्षकों का नितांत अभाव है। निजी संस्थान अकुशल शिक्षकों की नियुक्ति अल्प वेतन में करते हैं।जहां न केवल उनका शोषण होता है,बल्कि मानव निर्माण जैसी पुनीत कार्य पर कुठाराघात होता है।भारत जैसे प्रजातांत्रिक राष्ट्र में व्यापक निजीकरण उचित नहीं है।पश्चिमी देशों का अंधानुकरण भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल नहीं है।परंतु वर्तमान सामाजिक आर्थिक परिपेक्ष में सर्व सुलभ शिक्षा हेतु निजीकरण आवश्यक है। परंतु निजीकरण की हानियों से बचने का उपाय सरकार को अवश्य करना चाहिए।इसके लिए शिक्षा की गुणवत्ता से समझौता नहीं करना चाहिए।निजी संस्थाओं के शिक्षकों की योग्यता और उन्हें प्राप्त होने वाले वेतन का सरकार को समय-समय पर पुनरीक्षण करवाना चाहिए।अभिभावकों के आर्थिक शोषण को रोकने के लिए स्पष्ट कानून बनाए जाएं तथा शिक्षण संस्थानों को मान्यता देने के लिए कड़े बनाए जाएं।आवश्यक मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का एक न्यूनतम स्तर निर्धारित किया जाए।उच्च स्तर पर NAAC जैसी व्यवस्था प्राथमिक एवं माध्यमिक संस्थानों पर भी लागू की जानी चाहिए।सभी प्राइवेट ट्यूशन पर रोक लगाई जानी चाहिए।सरकार को शिक्षा पर होने वाले व्यय को बढ़ाना चाहिए तथा उसे भविष्य के लिए पूंजी निवेश मानना चाहिए।इस हेतु समाज के समृद्ध व्यक्तियों को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में आज आवश्यकता इस बात की है,कि सार्वजनिक एवं निजी शिक्षा की समस्याओं को समझकर व उसे दूर कर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसमें सार्वजनिक संस्थाओं के साथ निजी संस्थाओं की भूमिका भी निर्विवाद है।

संदर्भ

1 शिक्षा में नवीन प्रवृत्तियां एवं नवाचार,योगेंद्रजीत,भाई,सुनीता सिंह,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।

2 उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षक,पांडे,डॉ. रामशकल,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा, 2012

3 https//irjhis.com

4 https//www.academiaerp.com

5 www.right-to-education.org

6 www.google.com